शोध मंथन, Impact Factor 6.726 (SJIF), UGC No. 40908 ISSN: (P): 0976-5255 (e): 2454-339X
Vol. X, No.II, pp (855-865) April - June 2019

शुक्रनीति में वर्णित सुशासन के सूत्रः समकालीन शासन/प्रशासन के विशेष संदर्भ में

पवन कुमार शर्मा
आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग,
चौ0 चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ (उ0प्र0)
Email: pawansharmaccs67@gmail.com

सारांश

प्राचीन भारत का समस्त ज्ञान वेदों, स्मृतियों, संहिताओं, उपनिषदों, आरण्यकों, सूत्रों, पुराणों, महाकाव्यों एवं नीतियों आदि के रूप में प्राप्त होता है। ये ग्रन्थ या तो किसी एक ऋषि या आचार्य के द्वारा लिखे गये थे या फिर विचार परंपरा (School of Thought) के वाहकों के द्वारा, जो भी हो इन सभी में राज्योपयोगी एवं जीवनोपयोगी अथाह सामग्री उपलब्ध है। यद्यपि इनके काल निर्धारण में कुछ विद्वानों को समस्या हो सकती है; क्योकि ये विद्वान भारतीय ज्ञान परंपरा से या तो परिचित नहीं हैं या उसे पाश्चात्य की तुलना में कमतर आंकते हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा में काल, व्यक्ति आदि से महत्वपूर्ण ग्रन्थ की विशय वस्तु एवं समाज की आवश्यकता की पूर्ति होती थी, उसी के दृष्टिगत विद्वान स्वयं अपने नाम तथा कालादि पर कम बल देते थे। इसीलिए पाश्चात्य विद्वान या पश्चिम परक विद्वान भ्रमित हो जाते हैं। किन्तु भारत की 'चिति' को समझने वाले अध्येता इस भ्रम से परे रहकर विषय वस्तु को महत्व देते हैं। यही कारण है कि यहाँ पर ज्ञान महत्वपूर्ण है समय, नामादि नहीं।

प्रस्तावना

संस्कृत वांग्मय में उदभट्नीतिकार शुक्र की कृति का नाम बहुत ही सम्मान से लिया जाता है। इसमें कुल पांच अध्याय तथा दो हजार चार सौ चौवन श्लोक हैं। पश्चिमी विद्वान इसके काल को लेकर थोड़ा ऊहापोह में हैं किन्तु भारतीय विद्वान शुक्रनीति को लगगभग 2600 वर्षो से अधिक प्राचीन मानते हैं और इसके उनके पास पर्याप्त प्रमाण हैं।[1] यद्यपि इसका उल्लेख महाभारत में भी आया है; महाभारत में उल्लेख आने के कारण इसका काल खण्ड लगभग 5 हजार वर्ष से अधिक हो जाता है।[2] मीमांसकों के द्वारा यह पाणिनी के काल से पूर्व की है; इस आधार पर भी इसका काल खण्ड 2600 वर्ष से अधिक का हो जाता है।[3] जो भी हो, शुक्रनीति के अध्ययन से अनेक विषयों, जोकि प्राचीन भारत में प्रचलन में थे और सुशासन के लिए राजा को उनका उपयोग करना चाहिए, पर शुक्रनीति में शुक्र ने विस्तार से प्रकाश डाला है। यद्यपि भारतीय मान्यता के आधार पर ये वही शुक्र हैं जो दानवों के गुरू थे और जिन्होने येन–केन–प्रकारेण अपने शिष्यों को स्वर्ग का न केवल अधिपति बनवाया बल्कि देवताओं को अपनी औशनस नीति

के द्वारा लम्बे समय तक प्रताड़ित भी किये रखा, इस प्रताड़ना से मनुष्य और देवों की मुक्ति के लिए भगवान को पृथ्वी पर मनुष्य के रूप में समय–समय पर अवतरित होना पड़ा।[4] तथापि, इसमें अभी और अधिक अनुसंधान की आवश्यकता है जिससे यह स्पष्ट हो सके कि शुक्रनीतिसार दानव गुरू भृगुवंशी शुक्राचार्य द्वारा प्रणीत है या उनकी विचार पंरपरा के अध्येताओं द्वारा उसका संकलन किया गया है। अस्तु।

भारत में सुशासन की अवधारणा प्राचीन संस्कृत साहित्य में बहुतायत में देखने को मिलती है। रामायण, कौटिल्यीय अर्थशास्त्र, महाभारत का शान्तिपर्व एवं सभापर्व तथा लौंगाक्षी स्मृति आदि प्रमुख हैं। इन सभी ग्रन्थों में सुशासन पर कहीं सूत्र रूप में और यही पर विस्तृत उल्लेख देखने को मिलता है। किन्तु शुक्रनीति में इन सभी ग्रन्थों से थोड़ा अलग सुशासन की अवधारणा पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है, जिसमें पारदर्शिता के सिद्धान्त को इसका मुख्य आधार माना गया है और इसके लिए शासकीय लेख–पत्रों की (नोट शीट्स) की परंपरा के निर्वहन पर सतत् बल दिया गया है। प्राचीन भारत में जब आज जैसे इलेक्ट्रॉनिक संसाधन नहीं थे तब शासकीय लेखपत्र ही सुशासन के प्रधान अवलंबन थे जिनके माध्यम से न केवल विषय–वस्तु की सत्यता से अवगत हुआ जा सकता था बल्कि पारदर्शिता का भी पूर्ण परिचय प्राप्त होता था, जिसके आधार पर उत्तरदायित्व और जवाबदेही सुनिश्चित होती थी। सरल नोट शीट्स की महत्ता का अनुमान प्राचीनकाल और वर्तमान में भी इससे लगाया जा सकता है कि उस पर जो भी टिप्पणी संबंधित अधिकारी ने कर दी उसको किसी भी अधिकारी के द्वारा पलटना या उसको नकारना आसान कार्य नहीं होता। शुक्र के काल से लेकर आज तक शासकीय लेख–पत्र का महत्व यथावत बना हुआ है। इसी बात को दृष्टिगत रखकर लोक कल्याण के लिए विश्व बैंक ने जो दस्तावेज 'गवर्नेस एण्ड डेवलेपमेन्ट' (1992) के नाम से जारी किया, वह भी सुशासन का अर्थ कुछ इसी प्रकार बताता है।अतः विश्व बैंक के अनुसार, **'वह व्यवस्था/ विधि, जिसमें शक्तियों का उपयोग किसी देश के आर्थिक एवं सामाजिक विकास के लिए किया जाता है, सुशासन कहलाता है।'**[4A]

उपर्युक्त परिभाषा के आधार पर शुक्रनीति में उल्लिखित सूत्रों के अध्ययन से सुशासन की अवधारणा का स्पष्टतः न केवल अनुभव होता है बल्कि उसकी महत्ता का भी प्रतिपादन होता है।

प्रस्तुत शोध–पत्र में शुक्राचार्य द्वारा प्रणीत विभिन्न विचारों में से उत्तरदायी शासन, के सूत्रों पर प्रकाश डाला जाएगा। समकालीन सुशासन के दृष्टिकोण से जो 'SMART (सिम्पल, मॉरल, एकाउंटेबल, रिसपॉन्सिबल ट्रांसपरेन्ट,) का संक्षिप्तीकरण प्रचलन में हैं[4B] उसी को शुक्राचार्य आज से हजारों साल पूर्व भी शासन के द्वारा अनिवार्य रूप से प्रचलन में लाकर शासन को उत्तरदायी बनाने की पहल करते हैं। शुक्राचार्य के सूत्र आज भी सुशासन के दृष्टिकोण से शासन/प्रशासन में प्रयुक्त होते हैं किंतु हमें उसका भान नहीं है क्योंकि हमने शुक्रनीति का अध्ययन इस दृष्टिकोण से किया ही नहीं है। प्रस्तुत शोध पत्र में, न केवल शुक्रनीति में वर्णित सूत्रों पर प्रकाश डालूंगा बल्कि समकालीन भारत में सूत्र किस प्रकार अधिनियम, अनुच्छेद

(संविधान के) धारा के रूप में प्रचलित हैं, भी प्रस्तुत करने का प्रयास करूंगा यही इस शोधपत्र का प्रमुख उद्देश्य है।

नोटशीट लेखन की परंपरा

शुक्रनीति के द्वितीय अध्याय में विस्तार से इस विषय पर प्रकाश डाला गया है कि टिप्पणी पत्र (Note sheet) को कैसे लिखें। शासकीय कार्य में तथा उत्तरदायी शासन के लिए इसका सर्वाधिक महत्व होता है। इसी को दृष्टिगत रखकर शुक्र लिखते हैं'' थोड़ा या ज्यादा विषयानुसार लेख लिखने के लिए लम्बे कागज के ऊपर उसे चार भागों में विभाजित करके उसके तीन भाग के भीतर आधे या चौथाई हिस्से में आड़ी–तिरछी लकीरों की पंक्ति बनाकर पत्र लिखना चाहिए।[5] इस श्लोक के माध्यम से नोटशीट का उपयोग कैसे करें उस पर प्रकाश डाला गया है। फिर आगे नोटशीट लेखन के गुण–दोषों का उल्लेख करते हैं–यथा''पूर्व कथित तीन तरह की पदावलियों में जो पत्र बांए से दाहिनी ओर भीतर तीन भागों में लिखा जावे, वह श्रेष्ठ होता है। इसके विपरीत दाएं से बाएं की ओर तीन भागों में जो पत्र लिखा होता है वह मध्यम श्रेणी का होता है तथा अर्द्धांश में लिखा गया पत्र मध्यम से भी कमतरतथा चतुर्थांश में लिखा गया अधम कोटि का माना गया है।[6] पत्र लेखन के विभाजन को देखकर लगता है कि शुक्र नियमानुसार पत्र के अधिकतम उपयोग को महत्व देते हैं। वे आगे लिखते हैं कि पत्र (नोटशीट) सुन्दर एवं सुपाठ्य हो तथा अक्षरों का संयोजन आकर्षक हो।[7] यानि, नोटशीट का आंरभ इस प्रकार से किया गया हो कि राजा उसको पढ़कर विषय को समझ लेवे तथा उस पर विचार कर लेखानुसार (जैसा विषय नोटशीट पर अंकित है) जैसा चाहे वैसा अपना अभिमत उस पर दे।[8] तदोपरान्त पत्र पर (नोटशीट) मन्त्री, विधिवेत्ता विद्वान, राजप्रतिनिधि अपना–अपना अभिमत लिखने के बाद ही राजा के सामने उस पत्र (नोटशीट) को उपस्थित करें।[9] यानि, मन्त्री, विधिवेत्ता, विद्वान तथा राजप्रतिनिधि सभी के लिए यह अनिवार्य है कि वे उस पर अपनी–अपनी योग्यतानुसार, दायित्वानुसार अभिमत दें, जिससे पत्र को पढ़ कर राजा उस पर निर्णय ले सके। इस श्लोक के प्रकाश में यह ध्यान में आता है कि राजा के सहयोगियों में से भी कोई भी पद या व्यक्ति ऐसा नहीं है जो अपने उत्तरदायित्व से बच पावे। मन्त्री अपने ज्ञान कौशल के आधार पर, विधिवेत्ता विधि सम्मत, विद्वान (जिन्होने विषयों को व्यवस्थित रूप से समझा है और विशेषज्ञता अर्जित की है उस के अनुसार टीप देवें। हो सकता है वह टीप पूर्व टीपों से भिन्न हो किन्तु विशेषज्ञ का मत सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है।) तदोपरान्त राजप्रतिनिधि राज्य के हितानुसार टीप देवें और इन समस्त टीपों को दृष्टिगत रखकर राजा धर्म सम्मत निर्णय ले। इस प्रकार से वरिष्ठता के क्रम से दायित्व में भी वृद्धि हो रही है और वह पत्र पर टीप के रूप मे उपस्थित भी है। इस प्रकार से शुक्र आज से हजारों वर्ष पूर्व उत्तरदायी शासन/प्रशासन की न केवल बात करते हैं बल्कि वह व्यवहारिक रूप से प्रचलन में कैसे आवे इस पर भी प्रकाश डालते हैं। वे लिखते हैं कि सर्व प्रथम अमात्य के द्वारा यह लिखा जावे कि 'यह लेख यानि टिप्पणी अच्छी है' फिर उस पर सुमन्त्र (यानि मंत्रियों में भी श्रेष्ठ मंत्री जिसकी मंत्रणा शुभ हो)[10]लिखे कि ''मैने इस पर भलीभांति विचार किया है।''[11]सुमन्त्र अपने विचार से भी अवगत करावे, कि उसका विचार इस

चरण	
प्रथम	
द्वितीय	
तृतीय	
चतुर्थ	
पंचम	
छठा	
सातवां	

लेख के विषय में क्या है। अमात्य से अभिप्राय सचिव से है। कौटिल्य इसकी व्याख्या करते हैं। वे लिखते है कि क्रम मे अमात्य फिर महामात्य तदोपरान्त मंत्री आता है।[12] सुमन्त्र के बाद पत्र प्रधान के सम्मुख जाता है और प्रधान वस्तुतः यह यथार्थ है, ऐसा लिखे।[13] प्रधान के ऐसा लिखने से यह प्रतीत होता है कि पत्र पर जो टीप नीचे से लिखकर आ रही हैं उनका 'यथार्थ' होना आवश्यक ही है; तभी तो प्रधान उस पर यथार्थ है की टीप लिख रहे हैं। इस प्रकार प्रत्येक स्तर पर उत्तरदायित्व सुनिश्चित किया जा रहा है। प्रधान के बाद पत्र राजप्रतिनिधि के सम्मुख उसका मंतव्य जानने के लिए जाता है। राजप्रतिनिधि के लिए भी शुक्र इसी प्रकार का प्रावधान करते हैं कि वह भी इस पर 'यह स्वीकार करने योग्य है' ऐसा लिखे।[14] शुक्र राजकुमार से भी यही अपेक्षा करते हैं कि वह भी यही लिखे कि 'यह लेख स्वीकार करने योग्य है' और इसके बाद पुरोहित भी इस पर अपनी स्वीकृति देवे।[15] यह भी अनिवार्य है कि सभी दायित्ववान पत्र पर अपनी मुहर लगावें और तदोपरांत पत्र राजा के सम्मुख जावे और राजा उस पर 'यह मुझे स्वीकृत है' लिख कर अपनी मुहर लगावे।[16] इस प्रकार प्रथम अवस्था में सभी चरणों से होता हुआ पत्र राजा तक पहुंचता है तथा सभी उस का अवलोकन करके उत्तरदायी भूमिका का निर्वहन करें ऐसा प्रावधान शुक्र देते हैं किन्तु कई बार कार्याधिक्य के कारण पूरा पत्र राजा के द्वारा या वरीयता क्रम में जो पद सोपान में वरिष्ठ अधिकारियों के द्वारा पढा जाना संभव प्रतीत नही होता है; ऐसी अवस्था में शुक्र प्रशासन को जिम्मेदार बनना सिखाते हैं यह उनके सुशासन का द्वितीय चरण है।

द्वितीय चरण में वे लिखते हैं कि जहां से पत्र प्रस्तुत किया जाता है वहाँ से पत्र पर लिखा जावें कि ''दूसरे महत्वपूर्ण कार्यों (यानि इस पत्र के पठन–पाठन से अधिक महत्वपूर्ण) में व्यस्त रहने के कारण युवराज प्रभृति पत्र के लेख के संपूर्ण विषयों को नहीं पढ़ सके, अतः इस लेख के संपूर्ण विषय का ठीक से अवलोकन किया है।''[17] इस टीप को पढ़ने के बाद मंत्रीगण भी उस पत्र पर अपनी मुहर लगा दें और इसी क्रम का निर्वहन राजा भी करे।[18] कार्याधिक्य के कारण कार्य में विलम्ब न हो इसलिए शुक्र इस 'जिम्मेदारी पूर्ण व्यवस्था' का प्रावधान द्वितीय चरण में करते हैं।

तृतीय चरण–पत्रों का निर्गतीकरण

शुक्र पत्र पर टीप–टिप्पणी के उपरांत कार्यों के क्रियान्वयन के लिए पत्रों के निर्गत करने की बात करते हैं तथा प्रत्येक आदेश के लिए यह अनिवार्य करते हैं कि उस के लिए राजा के द्वारा न केवल नोटशीट पर अनुमति दी जावे बल्कि उसके लिए पत्र भी निर्गत हों। इन पत्रों के सम्बंध में भी शुक्र विस्तार से चर्चा करते हैं। इस प्रकार के पत्र शुक्र नीति में कुल 21 हैं। पत्रों का निर्गत होना शुक्र अत्यधिक अनिवार्य मानते हैं। वे स्पष्ट रूप से व्यवस्था करते हैं कि ''राजा के लिखित आदेश के बिना किसी भी राजकर्मचारी को कोई काम नहीं करना चाहिए। राजा भी लिखित आदेश के बिना किसी भी कर्मचारी से कोई छोटा या बड़ा काम करने को न कहे।''[19] वह ऐसा करना अनिवार्य इसलिए करते हैं जिससे शासन/प्रशासन व्यवस्थित रूप से चले। क्योंकि उनका मानना है कि ''**भूल मनुष्य का स्वभाव है;** भ्रम न हो इसके लिए लेख बहुत बड़ा प्रमाण होता है। अतः जो राजा अलिखित आदेश देता है तथा जो सेवक बिना लिखित

राजाज्ञा के ही राजकाज करता है वे दोनों (राजा और कर्मचारी) चोर हैं।''[20] शुक्र की यह व्यवस्था न केवल राजा और कर्मचारी को एक व्यवस्था के अतंर्गत लाने का प्रयत्न करती है बल्कि भारतीय परिप्रेक्ष्य में संप्रभुताराजा के पास नही अपितु संप्रभुता का स्वामी 'परम पिता परमात्मा' है की ओर भी इंगित करती है। राजा तो मात्र उनका पालक और संरक्षक मात्र हैं इसलिए अगले श्लोक में वे स्पष्ट रूप से लिखते हैं कि ''राजा की मुहर लगा आदेश पत्र ही असली राजा है। केवल राजा ही राजा नहीं होता है।''[21] क्योंकि, यदि मात्र राजा ने कोई आदेश दे दिया तो वह राजा का व्यक्तिगत निर्णय हो सकता हैं किंतु यदि उस पर मुहर लगी है तो निश्चित ही वह प्रशासन के विभिन्न चरणों से होकर राजा के सम्मुख आता है जिसमें संपूर्ण पारदर्शिता है। विभिन्न चरणों से होकर आने के कारण उस पर विभिन्न प्रकार के अभिमत भी अंकित होते हैं जिनके प्रकाश में राजा उचित निर्णय लेने में सक्षम होता है और यदि अभिमत राजा सम्मत, विधि सम्मत, लोक सम्मत तथा धर्म सम्मत है तो उस को हस्ताक्षर कर के मुहर लगाने में कोई असुविधा नहीं होती। इस प्रकार से शासन में पारदर्शिता के तत्व स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते हैं।

राज आज्ञाओं की स्थिति पर भी शुक्र प्रकाश डालते हुए लिखते हैं कि राजा की मुहर लगी राजाज्ञा परमोत्कृष्ट होती है। (क्योंकि विभिन्न चरणों से होकर आने के कारण इस पर सभी की सम्मति होती है।) मुहर रहित राजा के हस्ताक्षर युक्त राज निर्देश उत्तम कोटि का है। (यहां पर शुक्र यह स्पष्ट करते हैं कि राजाज्ञा यानि समस्त चरणों से होकर संपन्न होने वाली प्रक्रिया है, इसलिए वह सर्वोत्तम है क्योंकि उस पर किसी का विरोध या असहमति नहीं हैं, किंतु जो मुहररहित है राजाज्ञा नहीं अपितु राजा का निर्देश है क्योंकि वह व्यक्तिगत है अभी राजा की समस्त व्यवस्थाओं या प्रक्रियाओं द्वारा उसे मान्य नहीं किया गया है। आज की व्यवस्था के अनुसार कहें तो वह गजेटेड नहीं हैं इसीलिए वह उत्तम कही गई है क्योंकि उसके बने रहने में संशय विद्यमान हैं।) मंत्रियों का आदेश मध्यम कोटि में आता है। क्योंकि उसे भी अभी विभिन्न चरणों का सामना करते हुए परमोत्कृष्ट अवस्था तक जाना हैं। पुरवासियों (यानि पुर में कार्यरत अधिकारी/कर्मचारी) का आदेश अधम कोटि का है। (क्योंकि वह कभी भी उच्च स्तर के आदेश पर निरस्त करने योग्य हैं।)[22]

शुक्र न केवल कार्य का निर्धारण करते हैं, बल्कि कार्य व्यवस्थित हो तथा सभी के द्वारा निर्धारित कार्य नियत समय पर हो इसकी भी व्यवस्था देते हैं। इस व्यवस्था को आधुनिक समय में **'कार्यालयीन कार्य अध्ययन'** की श्रेणी में सम्मिलित किया गया है।[23] वे लिखते हैं कि ''जिन–जिन कामों के लिए जिन युवराज, सचिव आदि को पदधिकारी बनाया गया हो–वे सभी क्रमशः अपने कामों का विवरण दैनिक, मासिक, वार्षिक, बहुवार्षिक रूप में लिखकर सही ढंग से (सही ढंग से अभिप्राय निर्धारित प्रक्रिया के माध्यम से है) राजा के सामने देखने के लिए प्रस्तुत करें।''[24] कार्यालय प्रति को सुरक्षित रखने का भी प्रावधान देते हैं; जिससे समय पड़ने पर काम आवे। क्योंकि भूलना वे मनुष्य का स्वभाव मानते है।[25]

समस्त राज्यव्यवहार का लेखा क्यों रखा जावे? इसके लिए जहाँ वे (सुशासन), मनुष्य के व्यवहार का हवाला देते हैं वहीं वे इसके लिए विधाता की अनुभूति की भी बात करते हैं।

विधाता की अनुभूति जीवित रहे इसलिए विधाता ने प्राचीन काल में 'स्वर और व्यजंन' वर्णों से चिन्हित लेख का निर्माण किया।[26] इन लेखों को शुक्र दो श्रेणी में विभाजित करते हैं।

1.**समाचार संबन्धी लेख** 2. **आय व्यय संबंधी लेख**। इनमें प्रत्येक आचार और क्रिया के भेद से बहुविध होते हैं।[27] (इस श्लोक से यह भी प्रतीत होता है कि समाचार लेखन की परंपरा का विकास हो चुका था और संपूर्ण कार्यवाही को लेखबद्ध करने की व्यवस्था प्रचलन में थी यानि कार्यवाही का दौरा लिपिबद्ध किया जाता था) अब इस व्यवस्था के प्रकाश में मैं यहाँ पर शुक्र ने जो 21 प्रकार के 'पत्रों' का उल्लेख किया है, पर विस्तार से लिखता हूँ। आय–व्यय संबंधी लेख को इस पत्र के लिए समीचीन नहीं समझता हूँ इसलिए इस पर चर्चा नहीं की गई है।

1. **जय पत्रक** : जिसमें ठीक ढंग से कहे गए अभियोगी विषयों का तथा उसके उत्तर में कही गयी बातों का अन्तिम निर्णय अंकित हो, उसे 'जय पत्रक' कहते हैं।[28] समकालीन भारत में यह डिक्री के नाम से जाना जाता है। यह सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 की धारा 2(2) के अंतर्गत परिभाषित है।[28A]
2. **आज्ञा पत्र** : जिस लेख के द्वारा सामन्तों, राज्यपालों, तथा अन्य पदाधिकारियों को निर्दिष्ट काम करने का आदेश दिया जाता है, उसे 'आज्ञापत्र' कहते है।[29] (अंग्रेजी में इसी को चार्टर कहते हैं)
3. **प्रज्ञापना पत्र** : जिस पत्र के द्वारा यज्ञकर्ता, पुरोहित, आचार्य तथा अन्य पूज्य लोगों के लिए राजा लेख के माध्यम से कार्य की सूचना देता है या सूचित करता है, उसे 'प्रज्ञापना पत्र' कहते हैं।[30]
4. **शासन पत्र** : जिस पत्र के द्वारा राजा प्रजा से अपनी बात कहता कि हे प्रजा! तुम सभी मेरी बातें सुनो, मेरी आज्ञा से निर्धारित अपने कर्तव्य कर्म को करो ऐसा तिथि के साथ हस्ताक्षर युक्त पत्र 'शासन पत्र' कहलाता है।[31](आज के समय मे इसे सरकारी आदेश या जी.ओ. कहते हैं।)
5. **प्रसाद लिखित पत्र** : राजा किसी भी व्यक्ति के कार्यकलापों से प्रसन्न होकर पुरुस्कार स्वरूप कोई जनपद (जागीर) आदि दे देता है, को प्रसाद लिखित पत्र कहते हैं।[32] (आज–कल भी यह परंपरा प्रचलन मे है, अद्भुत वीरता, शौर्य, उद्भट विद्ववत्ता, खेल–कूद में विशेष उपलब्धि पर इस प्रकार के आदेश जारी होते हैं।) समकालीन भारत में अद्भुत वीरता और शौर्य के लिए परमवीर चक्र आदि–आदि, खेल के लिए अर्जुन पुरुस्कार तथा विद्ववत्ता के लिए पद्म श्री, पदम विभूषण आदि–आदि पुरुस्कार दिये जाते हैं।[32 A]
6. **भोग पत्र** : जिस पत्र में यह लिखकर दिया जाए कि 'तुम इसका उपभोग करो' उसे भोग पत्र कहते हैं।[33] समकालीन भारत में यह पट्टे के रूप में जाना जाता है तथा संपत्ति (अंतरण) हस्तांतरण अधिनियम 1882 की धारा 105 के अंतर्गत परिभाषित है।[33 A]
7. .**करदीकृत पत्र** : माल गुजारी वसूल करने के सम्बन्ध में जारी किए गए पत्र को

'करदीकृत' पत्रक कहा जाता है।[34]वर्तमान में यह भारत के प्रत्येक राज्य में प्रचलित भूराजस्व संहिता के अंतर्गत परिभाषित है।

8. **उपायनीकृत पत्र** : उपहार स्वरूप जो संपत्ति दी जाती है उससे संबन्धित जो पत्र जारी किया जाता है, को 'उपायनीकृत पत्र' कहते हैं।[35] वर्तमान भारत में संपत्ति (अंतरण) हस्तांतरण अधिनियम 1882 की धारा 122 के अंतर्गत परिभाषित हैं।[35A]
9. **पुरूषावधिक पत्र** : किसी भी संपत्ति आदि को जब एक से अधिक लोगों को उपभोग करने के लिए जो पत्र जारी किया जाता है उसे 'पुरूषावधिक पत्र' कहते हैं।[36] वर्तमान में यह भारतीय न्यास अधिनियम 1882 के अंतर्गत वर्णित है।[36A]
10. **कालावधिक पत्र** : जिस पत्र में किसी भी कार्य या अधिकार आदि से संबन्धित 'काल' या समय सीमा का निर्धारण करके पत्र दिया जावे उसे 'कालावधिक पत्र' कहते हैं।[37] वर्तमान में से मुख्तारनामा/प्राधिकार पत्र कहते हैं।[37A]
11. **विभाग पत्र** : स्वेच्छा से भाइयों के मध्य बंटबारे संबन्धी पत्र को भागलेख/विभाग पत्र कहते हैं।[38] वर्तमान में यह पारिवारिक बंटवारा के नाम से जाना जाता है और इससे संबंधित कोई विधि प्रचलन में नही है यह आपसी समझ पर आधारित है।[38A]
12. **धर्म पत्र** : घर, धरती, आदि किसी को देकर सार्वजनिक रूप से यदि यह घोषित कर दिया जावे कि यह अनाहार्य है तो उसे धर्म पत्र कहते हैं।[39] वर्तमान में यह भारतीय न्यास अधिनियम 1882 में सार्वजनिक न्यास के अंतर्गत वर्णित है।[39A]
13. **क्रय पत्र** : घर, जमीन आदि का उचित मूल्य देकर जो खरीददारी होती है, उसके लिए जो प्रामाणिक दस्तावेज तैयार किया जाता है, उसे 'क्रय पत्र' कहते हैं।[40] वर्तमान में यह संपत्ति (अंतरण) हस्तांतरण अधिनियम 1882 की धारा 54 के अंतर्गत वर्णित है।[40A]
14. **सादि लेख पत्र** : चल–अचल संपत्ति को रेहन रखकर 'यह रक्षणीय एवं उपभोग्य है' इस तरह की शर्त के साथ जो अनुबन्ध पत्र लिखा जाता है, उसे 'सादिलेख पत्र' कहते हैं।[41] वर्तमान में संपत्ति (अंतरण) हस्तांतरण अधिनियम 1882 की धारा 58 के अंतर्गत अचल संपत्ति से संबंधित रेहन को बंधक कहते है ।[41।] इसी प्रकार भारतीय संविदा अधिनियम 1872 की धारा 172 के अंतर्गत इसे चल संपत्ति के रेहन को गिरवी कहते हैं।[41B]
15. **संवित्लेख्य पत्र** : ग्रामीण एवं नागरिक एक साथ मिलकर प्रशासन के सहयोगी धर्म की रक्षा के लिए जो प्रतिज्ञा – पत्र (उवन) लिखते हैं, उसे 'संवित्लेख्य' कहा जाता है।[42] (आजकल प्राइवेट पब्लिक पार्टनरशिप 'संवित्लेख्य –पत्र' का ही आधुनिक रूप है।)
16. **ऋण पत्र** : सूद की शर्त पर रूपये उधार लेकर गवाही के साथ अपने हाथ से लिखे या किसी से लिखवाए पत्र को विद्वान लोग 'ऋण – पत्र' कहते हैं।[43] वर्तमान में परक्राम्य विलेख अधिनियम 1881 की धारा 4 के अंतर्गत यह वचन पत्र के रूप में प्रचलित है।[43A]
17. **शुद्धि पत्र** : लगाए गए अभियोग को प्रमाणित न होने पर प्रायश्चित कर चुकने के बाद गवाह के हस्ताक्षर युक्त जो अभियोग मुक्ति प्रमाण – पत्र मिलता है उसे 'शुद्धि पत्र' कहते

है।[44]

18. **सामयिक लेख पत्र** : कुछ उद्योगपति अपने धन का हिस्सा लगाकर भागीदार के रूप में कोई उद्योग चलाने के लिए संवित पत्र तैयार करते है उसे –'सामयिक लेखपत्र' कहते है।[45](वर्तमान में शेयर होल्डिंग प्रक्रिया के रूप में यह प्रचलन में हैं।) वर्तमान में यह भारतीय भागीदारी अधिनियम 1932 की धारा 4 के अंतर्गत वर्णित है।[45A]
19. **सम्मित संज्ञक पत्र** : शिष्ट नागरिक, पदाधिकारी वर्ग, अमात्यादि प्रधान पुरूषों एंव पार्षदों के द्वारा लिए गए अप्रदर्शित निर्णय यदि वादियों को मान्य हों तो उस संबन्ध के लेख पत्र को 'सम्मित संज्ञक पत्र' कहते हैं।[46] वर्तमान में यह शासकीय गुप्त बात अधिनियम 1923 के अंतर्गत वर्णित हैं।[46A]
20. **क्षेम पत्र** : जिस पत्र में संपूर्ण समाचार से संबंधित ब्यौरा, हमेशा स्वस्ति या मंगल सूचक शब्दों से प्रारंभ करके प्रश्नोत्तर युक्त असंदिग्ध, स्पष्ट अर्थ वाले तथा साफ एवं सुडोल अक्षरों वाले हस्तान्तरित होने से बचने के लिए अपने या दूसरों के पिता आदि के नामों से युक्त एक, दो या बहुवचनों से प्रशस्ति युक्त काम को सही ढंग से सूचित करने वाला, वर्ण, मास, पक्ष, दिन, नाम तथा जाति बोधक शब्दों से चिन्हित, सुसंगत, यथायोग्य प्रणाम या आशीर्वाद युक्त, स्वामी एवं सेवक के बीच परस्पर सेवा से संबन्धित पत्र को 'क्षेमपत्र' कहते हैं।[47] (वर्तमान में स्पीकिंग लेटर इसी श्रेणी में आता हैं।)
21. **भाषा पत्र/अभियोग पत्र/वेदनार्थक पत्र** : उपर्युक्त समस्त गुणों से वर्णित लेखक की मनोव्यथाओं को व्यक्त करने वाले पत्र को 'भाषापत्र/अभियोग पत्र/वेदनार्थक' पत्र कहते है।[48]

शुक्र के विचारों की समकालीन परिस्थितियों में उपादेयता

यद्यपि शुक्रनीति का प्रणयन आज से लगभग 2600 वर्ष पूर्व हुआ था तथापि उसमें सुशासन से संबंधित जो सूत्र उपलब्ध हैं वे आज भी उतने ही प्रासंगिक है जितने तब थे। यथा जय–पत्र (डिक्री), आज्ञा–पत्र (चार्टर), शासन–पत्र (जी.ओ.), प्रसाद–लिखित पत्र (जिनके माध्यम से पुरूस्कार आदि की घोषणा की जाती है) सामयिक पत्र (शेयर आदि से संबंधित) क्षेम–पत्र (समझौता पत्र, एग्रीमेंट आदि) उसी प्रकार प्रचलन में है जिस प्रकार से शुक्रनीति के प्रणयन के काल में थे। नोटशीट पर लेखन के द्वारा संबंधित अधिकारी की जवाबदेही भी आज सर्वविदित है। राजा से लेकर प्राथमिक स्तर तक नोटशीट प्रस्तोता के विषय में जिस प्रकार से शुक्र ने क्रमतय किया है वह भी आज के परिप्रेक्ष्य में न केवल अनुकरणीय है बल्कि यह जवाबदेही भी सुनिश्चित करता है। इस प्रकार एक पारदर्शी शासन व्यवस्था जो कि सुशासन का आधारभूत आयाम है,को लागू करने में शुक्र के सिद्धान्त/सूत्र आज भी समीचीन प्रतीत होते हैं। नोटशीट लेखन, को वे पर्याप्त नहीं मानते बल्कि उसकी पूर्णता वे तब मानते है जब तक कि उसके आधार पर पत्र का लेखन, वितरण, कार्यालयीन संग्रहण आदिन हो जाये। यानि, वर्तमान में कोई भी कार्यवाही जब तक सार्वजनिक परिक्षेत्र में न जावे तब तक उसका पूर्ण होना नहीं माना जाता, इसी प्रकार की व्यवस्था होने की वे बात करते हैं। शासकीय क्रियाकलापों से संबंधित अभिलेखों को वे

सार्वजनिक करने की बात करते है, बशर्ते वे अत्यत गोपनीय नहीं हैं।

इस प्रकार शुक्रनीति के अध्ययन के उपरांत यह दृष्टिगत होता है कि शुक्र के द्वारा लिख गया ग्रंथ सुशासन के दृष्टिकोण से लिखा गया सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ हो सकता हैं क्योंकि यह ग्रन्थ उन्हीं मुद्दों पर प्रकाश डाल रहा हैं जिन मुद्दों पर आजकल सुशासन पर लिखी गई पुस्तकें प्रकाश डाल रहीं है और स्मार्ट (SMART) सरकारों की बातें कर रही है। ये बातें न केवल आज की जा रही हैं बल्कि आज से डेढ़–दौ सौ वर्ष पूर्व भी अंग्रेज इन बातों को भारत के ग्रन्थों से सीख कर उनके आधार पर व्यवहार करने की प्रयास करते प्रतीत होते हैं। मैंने जो उद्धरण तुलनात्मक दृष्टिकोण से दिए हैं, वे 1871, 1882, 1923 के हैं। यह वह समय हैं जब अंग्रेजों ने संस्कृत साहित्य को न केवल पूर्ण रूपेण पढ़ लिया था बल्कि उसका उन्होंने यूरोप की कई भाषाओं में अनुवाद भी कर लिया था।[49] भारतीय ज्ञान के प्रति ललक जगाने का कार्य सर्वप्रथम ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कंपनी के कलकत्ता स्थित सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश सर विलियम जोन्स थे, जो 1783 में भारत आए और लगभग 10 वर्ष तक भारत में रहे; उन्होंने न केवल संस्कृत ग्रन्थों का अनुवाद किया बल्कि स्वयं भी संस्कृत व्याकरण का अध्ययन किया तथा इस कार्य को करने के लिए 'रॉयल एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल' की स्थापना भी 1784 में की। वारेन हेस्टिंग्स भारत के गर्वनर जनरल को इसका अध्यक्ष और स्वयं को उपाध्यक्ष बनाया। वे न केवल भारत के साहित्य से प्रभावित थे, बल्कि 'मनुस्मृति' को वे भारत की दृष्टि से लिखा गया एक श्रेष्ठ ग्रंथ मानते थे और यही कारण था कि उन्होंने इसका 'इंस्टीटयूट्स ऑफ हिन्दू लॉ' के नाम से अंग्रेजी भाषा में अनुवाद भी किया। इस प्रकार से जब यूरोप के क्रमिक विकास का हम अध्ययन करते हैं तो यह ध्यान में आता है कि जैसे–जैसे संस्कृत वांग्मय का यूरोपीय भाषाओं में अनुवाद होता जा रहा है वैसे–वैसे ही यूरोप में उनका प्रभाव दृष्टिगोचर होता जा रहा है। इसी बात को विल ड्यूरण्ट अपनी 1835 में लिखी गई पुस्तक 'केस फॉर इंडिया' जिसका पुनमुर्द्रण 2111 में हुआ स्पष्ट रूप से लिखते हैं कि ''भारत माता अनेक रूपों में हम सब की माँ है।''[50] किन्तु अंग्रेजी के व्याहमोह में पढ़कर हमने अपने अपार श्रेष्ठ साहित्य को दुर्लक्ष्य किया और विश्व के पिछलग्गू बन गए है। संपूर्ण विश्व ने हमसे सीखा और आज हम अपना खोया हुआ ज्ञान ही शेष विश्व से प्राप्त करने का प्रयास कर रहे हैं। यह शोध पत्र इसी दिशा में किया गया एक लघुतम प्रयास है।

सन्दर्भ ग्रंथ

1. शुक्रनीति सार– डॉ. जगदीश चंद्र मिश्र का भाष्य, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, वर्ष–2009, पृष्ठ–10
2. महाभारत
3. शुक्रनीति, तदैव, पृष्ठ–12
4. दशावतारों का उल्लेख संस्कृत साहित्य में है और उनमें से कई अवतारों के अवतरित होने का कारण जनसामान्य का कल्याण ही है।

4[A] ई–वायुनंदन तथा डॉली मैथ्यु द्वारा संपादित, गुड गवर्नेन्स इनिशिएटिव्स इन इण्डिया : प्रेन्टिस हाल ऑफ इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली, 2003, पृष्ठ–17

4[B] ई–वायुनंदन तथा डॉली मैथ्यु द्वारा संपादित, गुड गवर्नेन्स इनिशिएटिव्स इन इण्डिया : प्रेन्टिस हाल ऑफ इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली, 2003, पृष्ठ–6

5. शुक्रनीति 2/360
6. तदैव– 2/361
7. तदैव– 2/361
8. तदैव– 2/362
9. तदैव– 2/363
10. वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस गोरखपुर, 1/7/3
11. शुक्रनीति– 2/364
12. कौटिल्यीय अर्थशास्त्र
13. शुक्रनीति 2/315
14. तदैव
15. तदैव–2/366
16. तदैव 2/367
17. तदैव 2/368
18. तदैव 2/369
19. तदैव 2/290
20. तदैव 2/291
21. तदैव 2/292
22. तदैव 2/293
23. सन्दर्भ देना है।
24. शुक्रनीति–2/294–95
25. तदैव –2/296
26. तदैव –2/297
27. तदैव –2/298
28. तदैव –2/299

28[A] धारा 2 (2) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908

29. तदैव –2/300
30. तदैव –2/301
31. तदैव –2/302

32. तदैव –2/303
32[A] अनुच्छेद 18, भारत का संविधान
33. तदैव –2/304
33[A] धारा 105, संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882
34. तदैव
35. तदैव
35[A] धारा 122, संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882
36. तदैव
36[A] भारतीय न्यास अधिनियम 1882
37. तदैव
37[A] मुख्तारनामा अधिनियम, 1882
38. तदैव –2/305
38[A] त्रिपाठी, जी.पी. संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882
39. तदैव –2/306
39[A] भारतीय न्यास अधिनियम, 1882
40. तदैव –2/307
40[A] धारा 54, संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882
41. तदैव –2/308
41[A] धारा 58, संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882
41[B] धारा 172, भारतीय संविदा अधिनियम 1872
43. तदैव –2/310
43[A] धारा 4, भारतीय परक्राम्य लेख अधिनियम 1881
44. तदैव –2/311
45. तदैव –2/312
45[A] धारा 4, भारतीय भागीदारी अधिनियम 1932
46. तदैव –2/313
46[A] शासकीय गुप्त बात अधिनियम 1923
47. तदैव –2/314
48. तदैव –2/315
49. ए.एल.बाशम, अद्भुत भारत, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कंपनी, आगरा, पृष्ठ–4–5।
50. विल ड्यूरण्ट, 'केस फॉर इण्डिया' स्ट्राण्ड बुक स्टॉल, मुंबई, 2011, पृष्ठ–3